॥ ओ३म् ॥
वेद प्रचार, विश्व शान्ति, राष्ट्रोत्थान एवं सम्पूर्ण क्रान्ति के लिये समर्पित पाक्षिक पत्र

आर्य नीति

कृण्वन्तो विश्वमार्यम

वर्ष : 17 अंक : 12 25 जून 2017 मूल्य एक प्रति : 3 रुपये डाक पंजियन संख्या : JaipurCity/250/2015-17 वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

आजादी के जश्न जैसा मना अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस

180 देशों में किया गया योग

योग के पुनरुद्धारक महर्षि दयानन्द

– सत्यव्रत सामवेदी

विश्व के 180 राष्ट्रों में 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस अत्यन्त उल्लास के साथ आयोजित किये गये। पतंजलि की योग विद्या विश्व को अद्वितीय देन है। भारतवर्ष में अनेक योगी हुए हैं और 19वीं शताब्दी में महर्षि दयानन्द के समय में भी अनेक योगी थे परंतु सामान्य जनता में योग का प्रचार नहीं था।

पूरा विश्व आधियों और व्याधियों से ग्रस्त है और विश्व के डॉक्टर किस प्रकार बेरहमी से बीमार लोगों को लूटते हैं। दवाइयों का उत्पादन सर्वाधिक लाभप्रद व्यवसाय हो गया है। इन स्थितियों में बिना एक पैसा खर्च किए बीमारियों को समाप्त करने की योग विद्या ने सारे विश्व को आकृष्ट किया। भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को यह श्रेय जाता है कि उन्होंने योग विद्या को विश्व व्यापी बनाने का प्रयास किया और राजनेताओं को यह प्रेरणा मिली महर्षि दयानन्द के अनुयायी बाबा रामदेव से।

महर्षि दयानन्द 19 वर्ष की बाल्यावस्था में सच्चे शिव की तलाश में निकले और उत्तराखंड में पौने दो वर्ष तक विद्वानों तथा योगियों की खोज करते रहे। महर्षि को इसी खोज में ज्वालानंदपुरी और शिवानंदगिरी नामक दो योगियों से भेंट हुई। उनके साथ योग का साधन किया और अहमदाबाद के पास दुग्धेश्वर महादेव के मंदिर में इन दो योगियों ने योग के अत्यन्त सूक्ष्य तत्वों और उससे प्राप्त करने की विधि बताई। महर्षि अपने स्वचरित में लिखते हैं कि –''मैं उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। वास्तव में उन्होंने यह मुझ पर बड़ा ही उपकार किया जिसके कारण मैं उनका अत्यन्त ही आभारी हूँ।'' इन दो योगियों से उन्होंने यह सुना कि आबू पर्वत पर बहुत योगी रहते हैं और उनकी खोज करते हुए महर्षि अर्बुदा भवानी नामक चोटी पर और अन्य स्थानों पर योगीराजों से जा मिले और महर्षि के अनुसार ये उन महात्माओं से अधिक ज्ञानी तथा विद्वान थे। महर्षि ने इन योगियों से विशेष योग साधन के सूक्ष्म तत्वों को प्राप्त किया। उत्तराखंड के पर्वतों में महर्षि भटकते रहे परंतु पहाड़ों में योगी नहीं मिले।

महर्षि फिर योगियों की खोज में नर्मदा के स्रोत की ओर चल पड़े और रास्ता इतना भयानक था कि उन्हें विकट वन में रेंगकर चलना पड़ा और उनका शरीर लहुलुहान हो गया। इस जंगल में वृक्षों की जड़ों को मतलवाले हाथियों ने तोड़कर और उखेड़ कर वहां फेंक दिया था। महर्षि दयानन्द लिखते हैं 'थोड़ी ही दूर आगे बढ़ने पर मुझको एक बहुत ही बड़ा जंगल दिखाई दिया कि जिसमें घुसना भी कठिन था अर्थात् इतने घने बेर आदि के कटिदार वृक्ष वहां पर लगे हुए थे कि उनके अंदर से निकलकर जंगल और वन में पहुंचना बहुत कठिन ही नहीं प्रत्युत्त असंभव दिखाई देता था। पहले पहल तो मुझको उसके अन्दर से निकलना असंभव दिखाई दिया परंतु तत्पश्चात् पेट के बल घुटनों के सहारे मैं शनै-शनै सर्प के समान उन वृक्षों में से निकला और इस प्रकार उस रुकावट और कठिनाई को दूर किया और उस पर विजय प्राप्त की। यद्यपि उस महान विजय के प्राप्त करने में मुझे अपने वस्त्रों के टुकड़ों का बलिदान करना पड़ा और कुछ बलिदान मुझको अपने शरीर के मांस का भी करना पड़ा जो उसके अंदर से क्षत-विक्षत होकर निकला।' परंतु तीन वर्ष तक नर्मदा भ्रमण तक उन्हें कोई योगी नहीं मिला और विद्या प्राप्ति के लिए वे दण्डी विरजानन्द स्वामी के पास मथुरा आ गये।

महर्षि ने योग विद्या दण्डी विरजानन्द का शिष्यत्व ग्रहण करने से पूर्व ही प्राप्त कर ली थी। स्वामी विरजानन्द से शिक्षा प्राप्त करने के बाद जब दयानन्द वेदों की दुंदुभी बजाने निकले तब भारत वर्ष को उनकी योग विद्या के बारे में जानकारी मिली। वे योग का भी प्रचार करते थे। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखा है–

जब मनुष्य प्राणायाम करता है, तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता जाता है। जब तक मुक्ति न हो, तब तक उसके आत्मा का ज्ञान बराबर बढ़ता जाता है।

दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्॥

–यह मनुस्मृति का श्लोक है

जैसे अग्नि में तपाने से सुवर्णादि धातुओं का मल नष्ट होकर शुद्ध होते हैं, वैसे प्राणायाम करके मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं।

प्राणायाम की विधि—

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य।

जैसे अत्यन्त वेग से वमन होकर अन्न-जल बाहर निकल जाता है, वैसे प्राण को बल से बाहर फेंक के बाहर ही यथाशक्ति रोक देवे। जब बाहर निकालनाचाहे तब मूलेन्द्रिय को ऊपर खींच रक्खे, तब तक प्राण बाहर रहता है। इसी प्रकार प्राण बाहर अधिक ठहर सकता है। जब घबराहट हो, तब धीरे-धीरे भीतर वायु को लेके फिर भी वैसे ही करता जाय, जितना सामर्थ्य और इच्छा

योग मृत्यु पर विजय प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त करने की विद्या है

हो। और मन में (ओ३म्) इसका जप करता जाय। इस प्रकार करने से आत्मा और मन की पवित्रता और स्थिरता होती है। एक **''बाह्यविषय''** अर्थात् बाहर ही अधिक रोकना। दूसरा **''आभ्यन्तर''** अर्थात् भीतर जितना प्राण रोका जाय, उतना रोक के। तीसरा **''स्तम्भवृत्ति''** अर्थात् एक ही बार जहाँ का तहाँ प्राण को यथाशक्ति रोक देना। चौथा **''बाह्याभ्यन्तराक्षेपी''** अर्थात् जब प्राण भीतर से बाहर निकलने लगे, तब उससे विरुद्ध उसको न निकलने

देने के लिए बाहर से भीतर ले और जब बाहर से भीतर आने लगे, तब भीतर से बाहर की ओर प्राण को धक्का देकर रोकता जाय। ऐसे एक दूसरे के विरुद्ध क्रिया करें तो दोनों की गति रुककर प्राण अपने वश में होने से मन और इन्द्रियाँ भी स्वाधीन होते हैं। **बल, पुरुषार्थ बढ़कर बुद्धि तीव्र, सूक्ष्मरूप हो जाती है कि जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय कोभी शीघ्र ग्रहण करती है।** इससे मनुष्य शरीर में वीर्य्यवृद्धि को प्राप्त होकर, स्थिर बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता, सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझकर उपस्थित कर लेगा। **स्त्री भी इसी प्रकार योगाभ्यास करे।**

योग से आश्चर्यजनक सिद्धियां प्राप्त होती हैं और ये सब सिद्धियां महर्षि को प्राप्त थीं। महर्षि की योग विद्या की कीर्ति अमेरिका तक फैली और अमेरिका की थियोसिफिकल सोसायटी के संस्थापक मैडम ब्लैवेत्सकी और कर्नल अलकाट ने दयानन्द का शिष्य बनने की कामना व्यक्त की और वे सब आर्य समाज में शामिल होने के लिए तैयार हो गए। थियोसिफिकल सोसायटी के संस्थापक और उनके अनुयायी महर्षि की योग विद्या से ही प्रभावित हुए थे।

कड़कती सर्दी में योग विद्या से पसीने से तरबतर होना, दो लड़ते हुए सांडों के सींगों को पकड़कर अलग कर देना, चार घोड़ों की बग्घी को एक हाथ से रोक देना, पहलवानों को बगल में दबाकर गंगा में कूद जाना, हजारों उत्पाती लोगों के बीच में निर्भीकतापूर्वक निकल जाना, सारे संसार को चुनौती देना ये सब उनकी योग विद्या के ही प्रमाण थे परंतु सच्चे योगी सिद्धियों को दिखाते नहीं है। सिद्धियों को दिखाना योगी के पतन का कारण बनता है। थियोसिफिकल सोसायटी की मैडम ब्लैवेत्सकी और उनके अनुयायी हमेशा दयानन्द जी को योग का चमत्कार दिखाने का आग्रह करते रहते थे। थियोसिफिकल सोसायटी चमत्कार दिखाकर अमेरिका को आकृष्ट कर रही थी। ब्लैवेत्सकी ने महर्षि को पत्र लिखा- 'आपके पत्र से यह ज्ञात होता है कि आप चमत्कारों को नहीं मानते। आप उन्हें दर्शनशास्त्र के अध्ययन तथा मनुष्य की अपनी आध्यात्मिक शक्तियों की अपेक्षा बहुत हीन समझते हैं। निस्संदेह यही बात बुद्धिमत्ता की है और हम भी यही मानते हैं पर यहां के सर्व साधारण लोग दार्शनिकता के विरुद्ध है और चमत्कारों के भूखे हैं।'

महर्षि दयानन्द ने थियोसिफिकल सोसायटी के संस्थापकों को लिखा- 'मैं इन तमाशों की बातों को देखना दिखलाना उचित नहीं समझता, चाहे वह हाथ की चालाकी से हों चाहे योग की रीति से हों क्योंकि योग के किये कराये बिना किसी को भी योग का महत्त्व या इसमें सत्य प्रेम कभी नहीं हो सकता, वरन् संदेह और आश्चर्य में पड़कर उसी तमाशा दिखाने वाले की परीक्षा और सब सुधार की बातों को छोड़ तमाशे देखने को सब दिन चाहते हैं और उसके साधन करना स्वीकार नहीं करते। जैसे सीनेट साब को मैंने न दिखलाया और न दिखलाना चाहता हूँ, चाहे वह राजी रहे या नाराज हों, क्योंकि जो मैं इसमें प्रवृत्त होउँ तो सब मूर्ख और पंडित मुझसे यही कहेंगे कि हमको भी कुछ योग के आश्चर्य काम दिखलाइये जैसे उसको आपने दिखलाया। ऐसे संसार को तमाशे की लीला मेरे साथ भी लग जाती जैसी मैडम ब्लैवेत्सकी के पीछे लगी हुई है। किन्तु कोई चाहे तो उसको योग रीति सिखा सकता हूँ कि जिससे वह स्वयं योगाभ्यास कर सिद्धियों को देख ले। इससे उत्तम बात दूसरी कोई नहीं है।' बाद में महर्षि ने थियोसिफिकल सोसायटी से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। क्योंकि न वे योग की गंभीरता को समझते थे और न वैदिक धर्म को। योग उनके लिये जादू के खेलों और चमत्कारों का नाम था और अध्यात्म ज्ञान उन प्रदर्शनों का जो आत्माओं का किसी माध्यम द्वारा आह्वान करने तथा उनसे प्रश्न पूछने के लिए आयोजित किये जाते हैं। जब उन्हें योग सिद्धियों के उस स्वरूप के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त हुई जिसका प्रतिपादन स्वामी जी करते थे, और यह ज्ञात हुआ कि उनके लिए कितनी साधना की आवश्यकता है, तो योगी बनने की उनकी आशा पर कितना तुषारापात हुआ होगा इसकी कल्पना सहज में की जा सकती है। वे एक सरल मार्ग पर चलना चाहते थे पर वास्तविक योग का मार्ग तो सरल नहीं है। संभवतः उन्हें तो वास्तविक योग साधना अभीष्ट भी नहीं थी उनके लिये तो वही चमत्कार योग थे, जिन्हें स्वामी जी तमाशा कहते थे।

हिमालय की हिमाच्छादित चट्टानें जो रक्त को जमा देती हैं और उन पर सुकरात के समान नंगे पांव और सुकरात से बढ़ कर नंगे शरीर एक कौपीन धारण किये हुए ब्रह्मचर्य की उष्णता के बल से चल कर महान वेगवान इच्छा का प्रमाण दे रहा है। महर्षि ने अनेक स्थलों पर लिखा है कि ईश्वर प्राप्ति का साधन और अमरता एवं मोक्ष का साधन योग है।

आज जो योग का सतही ज्ञान है उसका लक्ष्य स्वस्थ शरीर है। यौगिक क्रियाओं से व्याधि से मुक्त रहा जा सकता है। यह संदेश दयानन्द के अनुयायी बाबा रामदेव एवं नरेन्द्र मोदी सारे संसार को दे रहे हैं परंतु योग विद्या तो मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की विद्या है जिसका प्रचार आर्य समाज एवं योग के भक्तों को करना है। यह एक लम्बी यात्रा है और न जाने कौन इस लम्बी यात्रा पर चलने के लिए तैयार होगा।

स्वामी अग्निवेश को पत्र

भारतवर्ष को नैतिक नेतृत्व की आवश्यकता है

आदरणीय स्वामी जी,

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अंतरंग सभा की बैठक के एक दिन पूर्व मैंने स्वामी आर्यवेश जी को मोबाइल पर सूचना दी कि पांव में फ्रैक्चर होने के कारण मेरा चलना-फिरना बंद है और अंतरंग सभा की बैठक में उपस्थित होना असंभव हो गया है। स्वामी आर्यवेश जी उस समय आपके पास बैठे थे और कहा कि स्वामी अग्निवेश जी से भी बात कर लें। उस समय आपने मुझे कहा कि हमें वैदिक समाजवादी पार्टी बनानी चाहिए और उसकी रूपरेखा भी बताई और कहा कि इस सम्बन्ध में मेरी प्रकाशित पुस्तक भी आपने पढ़ी होगी। मैंने उत्तर दिया कि यह विषय आर्य जगत का है और आर्य समाज के निष्ठावान तथा समर्पित कार्यकर्ताओं के साथ परामर्श करके ही कोई निर्णय लिया जा सकता है।

दूसरे दिन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अंतरंग सभा की बैठक के बाद एक कार्यकर्ता ने मुझे मोबाइल पर बताया कि आज स्वामी अग्निवेश जी ने वैदिक समाजवादी पार्टी बनाने का विचार बैठक में रखा और विस्तार से उसकी रूपरेखा पर प्रकाश डाला परंतु अधिकांश उपस्थित पदाधिकारी एवं सदस्य आपके प्रस्ताव के पक्ष में नहीं थे और मैं भी सहमत नहीं हूँ।

मैं 81 वर्ष का हो गया हूँ और आप मुझसे एक-दो वर्ष छोटे हैं। हम यमराज के द्वार पर खड़े हैं। न जाने यमराज का द्वारपाल कब आवाज लगाए और हमें यमराज के सम्मुख प्रस्तुत होना पड़े और यमराज हमें न जाने किस लोक में भेज दे। इस रहस्य की जानकारी आज तक किसी को भी नहीं हुई।

वैदिक समाजवाद में तो 50 वर्ष के बाद वानप्रस्थ लेना होता है। राजा और सम्राट भी 50 वर्ष होने पर स्वेच्छा से अपना पद छोड़ देते थे और समस्त सुख सुविधाओं को तिलांजलि देकर वानप्रस्थ ले लेते थे और वन में चले जाते थे। अब 80 वर्ष की अवस्था में कोई हमें साम्राज्य भी थाली पर परोस कर दे दे तो उसका क्या महत्त्व है। इस आयु में तो हमारी काव्यमय प्रतिक्रिया निम्न प्रकार की होनी चाहिए-

कुछ भी आज नहीं मैं लूंगा,
जिस वस्तु की चाह मुझे थी,
जिस वस्तु की परवाह मुझे थी,
दी न समय पर तूने,
असमय लेकर क्या मैं करूंगा,
कुछ भी आज नहीं मैं लूंगा।

आप संन्यासी हैं। संन्यासी का स्थान सम्राट से भी ऊँचा होता है। उसे परिव्राट कहते हैं। आप परिव्राट हैं, जिसके सामने सम्राट को भी मस्तक झुकाना पड़ता है। आप कुछ मास पूर्व जयपुर आए थे और मुख्यमंत्री से मिलने गए थे। मुझे प्रत्यक्षदर्शियों ने बताया कि मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे ने बाहर आते ही आपके चरण स्पर्श किए। चरण स्पर्श इसी लिए किए कि आप संन्यासी हैं और परिव्राट हैं। संन्यासी के आगे नतमस्तक होना वैदिक संस्कृति है। सन्यास के प्रति हिन्दुओं में कितनी गहरी आस्था है कि अनेक धूर्त और व्याभिचारी गेरूआ वस्त्र पहन कर करोड़ों हिन्दुओं के पूज्य बने हुए हैं। व्याभिचार और असामाजिक, कुत्सित और घृणित आचरण के कारण कारावास में बंद हैं। फिर भी उनके लाखों अनुयायी उनके समर्थन में खड़े हैं और जेल अधिकारियों को उनके भक्तों से किस प्रकार सामना करना पड़ता है। हरियाणा में

रामपाल नामक कबीरपंथी ने कितना हंगामा मचाया हुआ था। उसका लक्ष्य आर्य समाज का मूलोच्छेदन करना था। वह आर्य समाज और महर्षि दयानन्द पर विष वर्षा करता रहता था। उस धूर्त का किस प्रकार पर्दाफाश हुआ, किस प्रकार आर्य समाज के वीर अनुयायियों ने उसके अस्तित्व को समाप्त करने के लिए संघर्ष किया और आर्य समाज के वीर पुत्रों ने अपने प्राणों की आहुति दी यह सर्वविदित है। इसी प्रकार हरियाणा में ही जो आर्य समाज का सर्वाधिक सशक्त केन्द्र है डेरा सच्चा सौदा के संस्थापक राम रहिम के लाखों अनुयायी हैं और राजनीतिक कारणों से उसे सत्ता का भी समर्थन प्राप्त होता रहा है। जोधपुर की जेल में बंद आसाराम के व्याभिचार की कहानी सारे देश को पता है और अब भी आसाराम के लाखों भक्त उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों को गलत मानते हैं और इसे हिन्दू धर्म के विरुद्ध साजिश समझते हैं। इस प्रकार के सैकड़ों तथाकथित संत और महंत भारतवर्ष में हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि हिन्दुओं की संन्यासियों के प्रति असीम श्रद्धा है और आप जैसे सुशिक्षित, क्रांतिकारी, मानवतावादी एवं परोपकारी संन्यासियों के प्रति हिन्दुओं की श्रद्धा की कल्पना की जा सकती है।

हमारे देश में कभी भी राजाओं और सम्राटों के प्रति वह आदर भाव नहीं रहा जो ऋषि-मुनियों और संन्यासियों के प्रति रहा है। हमारे देश में त्याग और बलिदान की ही पूजा होती रही है। वैदिक संस्कृति में उसी व्यक्ति को महान माना जाता है जो सत्ता को ठोकर मारता है। आप कल्पना कीजिए कि यदि राम ने वनवास स्वीकार नहीं किया होता तो आज राम की क्या स्थिति होती। राम वैदिक संस्कृति का अचल सम्राट बना हुआ है क्योंकि राम को वेद प्रतिपादित मूल्यों की राज्य से अधिक चिंता थी। योगेश्वर कृष्ण ने भी सैकड़ों राजाओं को स्वर्ण किरीटों धूलीधुसरित कर दिया परंतु राज्यों को अपने अधिकार में नहीं लिया। यदि सत्ता और राज्य ही काम्य होता तो बुद्ध और महावीर अपना सिंहासन क्यों छोड़ते। भतृहरी ने अपना राज पाट छोड़ कर वैराग्य ले लिया। दयानन्द अपनी विशाल सम्पत्ति छोड़कर संन्यासी बन गया और 19 वर्ष तक सतत संघर्ष करते हुए विश्व की महान शक्तियों को मिट्टी में मिला दिया। यह संन्यासी की शक्ति है। संन्यासी इतिहास की प्रचंड धाराओं को बदल देता है और समय की रेत पर अपने अमिट निशान छोड़ जाता है। आजादी के बाद महात्मा गांधी निर्विरोध भारत के राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री बन सकते थे परंतु गांधी का पद राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री से बहुत बड़ा है। गगनचुंबी कद है। यदि गांधी राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री बन जाते तो उनका इतिहास में क्या स्थान होता, इसकी सहज कल्पना की जा सकती है। इसी त्याग के कारण महात्मा गांधी को राष्ट्रपिता कहा जाता है।

परमेश्वर का एक कक्ष ऐसा है जो संन्यासियों, शहीदों, महात्माओं और बलिदानियों के लिए सुरक्षित है। उस कक्ष में राजाओं और सम्राटों का प्रवेश वर्जित है। इस कक्ष में आपका स्थान आरक्षित है।

यह विश्व एक रंगमंच है। इस रंगमंच के अनेक पात्र हैं। ईश्वर ने यह निश्चित कर रखा है कि किस पात्र को क्या अभिनय करना है। आपके लिए ईश्वर ने संन्यास के पात्र का अभिनय करने का कार्य दिया है जिसके आगे सम्राट को भी नतमस्तक होना पड़ता है। ईश्वर के इस वरदान को आप स्वीकार कीजिए।

हम यह चाहते हैं कि आप चाणक्य बनें और किसी चन्द्रगुप्त मौर्य को जन्म दें। आप क्रांतिकारी हैं, आप क्रांति चाहते हैं। क्रांति सत्ता से नहीं आती, अन्याय पर आधारित सत्ता के विरोध करने पर क्रांति का जन्म होता है। भगतसिंह कहा करता था कि क्रांति की तलवार विचारों की सान पर तेज होती है। दयानन्द ने विचारों की तलवार से सम्राटों को घुटने टेकने के लिए मजबूर कर दिया। हजारों साल की पातालचुंबी रूढ़िवादिता एवं अज्ञान की जड़ों का मूलोच्छेदन किया। करोड़ों मूर्च्छित एवं जर्जरित मानवों की धमनियों में शौर्य का रक्त प्रवाहित किया। हजारों साल से पददलित जिंदा लाशें दयानन्द का आह्वान सुनकर खड़ी हो गईं जिनकी सशक्त भुजाओं ने उस ब्रिटिश साम्राज्य को समाप्त कर दिया जिसका सूर्यास्त असंभव माना जाता था।

आपको उत्तराधिकार में महर्षि दयानन्द के वे विचार मिले हैं जो शाश्वस्त हैं, जो अपराजेय हैं, जो सनातन हैं, जो मानव जाति ही नहीं अपितु प्राणिमात्र के कल्याण के पथ प्रदर्शक हैं। यह आर्य जगत का सौभाग्य है कि उसे एक ऐसा संन्यासी मिला जिसमें विश्व के कोने-कोने में दयानन्द और वेद के संदेश को पहुंचाने का सामर्थ्य है। आज विश्व पुनः विनाश और हिंसा के द्वार

रास्ते में रुक के दम ले लूं ये मेरी फितरत नहीं, लौट कर वापस चला जाऊं ये मेरी आदत नहीं, और कोई हमनवां मिल जाए ये मेरी किस्मत नहीं

पर खड़ा है। धरा पुन: मानवता के खून से स्नान करने की कल्पना से कांप रही है। आज विश्व को 'वसुधैवकुटुम्बकम् या परिवार कहें वसुधाभर को' के संदेश की आवश्यकता है और आपके अतिरिक्त यह संदेश देने की क्षमता किसमें हैं।

आपको उत्तराधिकार में आर्य साम्राज्य मिला है। आप इस आर्य साम्राज्य के अधिपति हैं परंतु आर्य साम्राज्य आज यह शोक गीत गा रहा है-

तेरा हाथ मेरे कांधे पर, दरिया बहता जाता है,
कितनी खामोशी से दुख का मौसम गुजरा जाता है,
पहले ईंटें, फिर दरवाजें अबके छत की बारी है,
याद नगर का एक महल था वह भी गिरता जाता है,

यह आर्य साम्राज्य दम तोड़ रहा है। यह आर्य साम्राज्य वेंटीलेटर पर है। यह आर्य साम्राज्य आपको हसरत भरी निगाहों से देख रहा है। इस आर्य साम्राज्य की रक्षा करना मानवता की सबसे बड़ी सेवा है। भारतवर्ष की 80 प्रतिशत आर्य समाजें अस्तित्वहीन हो गई हैं और जिनका अस्तित्व भी है वहां 5-10 बूढ़ें रविवार को आकर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। ऐसी आर्य समाजों के बल पर आप कैसे क्रांति कर सकेंगे। मेरी दृष्टि में और यही दृष्टि आपकी भी रही है कि प्रत्येक व्यक्ति जन्म से आर्य समाजी होता है। यह अलग बात है कि कोई 5 प्रतिशत है, कोई 10 प्रतिशत, कोई 50 प्रतिशत, कोई 75 प्रतिशत, कोई 100 प्रतिशत। आर्य समाज का उद्देश्य विश्व में आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक शांति स्थापित करना। इस दृष्टि से विश्व के 75 प्रतिशत मानव आर्य समाजी हैं। विश्व में सारे मतभेद आर्य समाज के आध्यात्मिक शांति के दृष्टिकोण से हैं। मानव जाति को यह समझाने में बहुत समय लगेगा कि वेद ईश्वर कृति है और वेद प्रतिपादित आचरण ही धर्म है परंतु जहां तक आधिभौतिक और आधिदैविक शांति का प्रश्न है 75 प्रतिशत मानव आपके साथ खड़ा है। इन 75 प्रतिशत मानवों को अपने साथ जोड़ना हमारा लक्ष्य होना चाहिए और यह कार्य बिना संगठन के असंभव है। अत: यदि हम भारतवर्ष और अन्ततोगत्वा विश्व का कल्याण चाहते हैं तो हमें सब काम छोड़ कर आर्य संगठन पर ध्यान देना चाहिए।

आप एक वर्ष आर्य समाज को दें तो आर्य समाज विश्व की एक महान शक्ति बन जाएगा

हमारे जीवन के 80 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। गत 40-50 वर्षों से हम आर्य समाज की दुन्दुभि बजाते रहे हैं परंतु हम आज जब चारों तरफ देखते हैं तो यह अहसास होता है कि हम शून्य लोक में आ गये हैं। हम उस चिंता से ग्रस्त रहते हैं जो विश्व वन की व्याली है और ज्वालामुखी विस्फोट के भीषण प्रथम कंप सी मतवाली है। हम भी मनु की तरह शोक गीत गा रहे हैं-

अमर मरेगा क्या तू कितनी गहरी डाल रही है नींव

जब किसी राष्ट्र में निराशा के ऐसे क्षण आते हैं तब उषा सुनहरे तीर बरसती हुई जय लक्ष्मी सी उदित होती है।

गुरु गोविन्द सिंह के पिता गुरु तेग बहादुर की शहादत के 19 वर्ष बाद गुरु गोविन्द सिंह ने विश्व के सर्वाधिक शक्तिशाली सम्राट औरंगजेब को चुनौती देने के लिए आयोजित संगत में धर्म के लिए अपना शीश कटाने वाले भक्तों को आह्वान किया और पांच भक्त अपना शीश कटाने के लिए प्रस्तुत हुए जिन्हें पंज प्यारे कहा जाता है। आज की स्थिति में भी आप पंज प्यारों का आह्वान कीजिए। ये पंज प्यारे हो सकते हैं- स्वामी आर्यवेश, रमाकान्त आर्य (सारस्वत), मायाप्रकाश त्यागी, विट्ठलराव आर्य, सत्यव्रत सामवेदी।

आप भी भगवान बुद्ध की भांति सैकड़ों शिष्यों के साथ एक वर्ष तक भारत का भ्रमण करें और घोषणा करें कि आर्य साम्राज्य की स्थापना के लिए 10 हजार आर्य वीरों की आवश्यकता है। जिनकी आर्य साम्राज्य बनाने की अदम्य आकांक्षा है वे अपने नाम की घोषणा करें। तन-मन-धन से समर्पित 10 हजार आर्य वीर आपको मिल जाएंगे।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तीन पक्ष हैं और अब आपको तीनों पक्षों का ही नेतृत्व करना है। महात्मा गांधी की भांति चाहे आप कांग्रेस के सदस्य न हो परंतु महात्मा गांधी ही कांग्रेस के सर्वोच्च नेता और पथप्रदर्शक थे।

आपने अनेक क्रांतिकारी कार्यक्रमों को अंजाम देकर आर्य समाज को यशस्वी बनाया है जैसे सती प्रथा का विरोध और भ्रूण हत्या के विरुद्ध टंकारा से अमृतसर तक की यात्रा।

आप आर्य समाज का घोषणा पत्र बनाइये और भारतवर्ष को बताइये कि हम क्या चाहते हैं। दयानन्द, श्रद्धानन्द, रामप्रसाद बिस्मिल, भगतसिंह के सपनों का भारत क्या था। भारतवर्ष की जनता को यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि दयानन्द की 'योगक्षेमकारी स्वाधीनता' का क्या स्वरूप था।

आज दयानन्द के बादल विश्व आकाश में गरज रहे हैं। 19वीं शताब्दी में केवल महर्षि ने ही योग की महत्ता प्रतिपादित की थी और 21 जनवरी को 189 राष्ट्रों ने योग दिवस मनाया। आप कल्पना कीजिए कि यदि महर्षि दयानन्द ने योग की महत्ता प्रतिपादित नहीं की होती तो क्या आज कोई योग का नाम जानता।

दयानन्द ने 19वीं शताब्दी गो रक्षा का अभियान चलाया और गोकरूणानिधि लिखी। दयानन्द ने केवल गो वध का ही विरोध नही किया अपितु पशु वध का विरोध किया। गो वध और पशु वध का विरोध करते हुए महर्षि दयानन्द ने उद्गार प्रकट किए-

हे मांसाहारियों! तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात पशु न मिलेंगे, तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं? हे परमेश्वर! तू क्यों इन पशुओं पर, जो कि बिना अपराध मारे जाते हैं, दया नहीं करता? क्या उन पर तेरी प्रीति नहीं है? क्या उनके लिये तेरी न्याय सभा बन्द हो गई है? क्यों उनकी पीड़ा छुड़ाने पर ध्यान नहीं देता और उनकी पुकार नहीं सुनता? क्यों इन मांसाहारियों के आत्माओं में दया प्रकाश कर निष्ठुरता, कठोरता, स्वार्थपन और मूर्खता आदि दोषों को दूर नहीं करता? जिससे ये इन बुरे कर्मों से बचें।

आपने मुसलमानों के एक त्योहार में ऊंटों के वध का विरोध किया था, यह कितना बड़ा साहसिक कार्य था परंतु उस समय दिल्ली की सड़कों पर हजारों मुसलमानों के विरोध के सामने केवल चार-पांच साथी थे। यदि एक हजार आर्य वीर आपके साथ होते तो सारे देश में तहलका मच जाता। मोदी सरकार से हम अनेक मुद्दों पर असहमत हो सकते हैं परंतु गो वध और पशु वध पर तथा अवैध बूचड़खानों पर प्रतिबंध लगाकर मोदी जी ने महर्षि दयानन्द के सपनों को ही साकार किया है और इसके लिए हमें उन्हें धन्यवाद देना चाहिए।

किसानों की समस्याओं के समाधान के लिए भी सबसे पहले दयानन्द ने आवाज उठाई और गोकृष्यादिरक्षिणीसभा की स्थापना की। किसानों के हित में पं. रामप्रसाद बिस्मिल, लाला लाजपत राय, सरदार किशन सिंह और उनके पुत्र भगतसिंह ने जो रोमांचक शौर्य दिखाया वह भारतवर्ष के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है और इसी शौर्य के कारण ही आर्य समाज यशस्वी संस्था बन सकी। स्वामी इन्द्रवेश जी ने किसानों की फसल के समर्थन मूल्य के लिए अनेक बार आमरण अनशन किये और अपनी उमर किसानों को दे दी। स्वामी इन्द्रवेश के बलिदान के कारण ही आर्य समाज हरियाणा में सशक्त केन्द्र बना हुआ है। मैंने अनेक बार यह परामर्श दिया कि किसानों के हित में हमें आंदोलन करना चाहिए परंतु मेरे इस परामर्श को गंभीरता से नहीं लिया गया। आज किसानों के असंतोष का ज्वालामुखी फूट पड़ा है और सारी सरकारें किसानों के हित के गीत गाने लगी हैं। इसमें कोई शक नहीं कि नरेन्द्र मोदी तहेदिल से देश का उत्थान चाहते हैं परंतु जिस संगठन के वे सदस्य और प्रवक्ता हैं उस संगठन के वर्चस्व से राष्ट्र के टूटने का खतरा पैदा हो गया है। साम्प्रदायिक सद्भाव खत्म होता जा रहा है और जातिवादी युद्ध शुरू हो गए हैं। सहारनपुर और जेएनयू में सवर्णों और असवर्णों का युद्ध इसका जीता जागता प्रमाण है। इस स्थिति में आर्य समाज को बिस्मिल और अशफाक उल्ला के चित्र और संदेश लेकर सारे देश में साम्प्रदायिक सद्भाव का पांचजन्य फूंकने का स्वर्णिम अवसर है।

उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ योगी, ऐन्टी रोमियो अभियान चला रहे हैं परंतु अपराध रुक नहीं रहे हैं। क्या पुलिस के बल पर सर्वस्पर्शी नैतिक उत्थान का आंदोलन चलाया जा सकता है। इसके लिए स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है। आज की शिक्षा प्रणाली में अरबों रुपए की होली जलाई जा रही है, जिसका कोई परिणाम नहीं है। यह शिक्षा प्रणाली तो बेरोजगारी की फैक्ट्री है और यही बेरोजगार युवा देश में विप्लव लाएंगे। आज भी पूंजीवाद का परचम लहरा रहा है। पूंजीवाद ही हमारी सबसे बड़ी चुनौती है। क्या हम इस चुनौती को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं?

भारतवर्ष ही नहीं अपितु विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान आर्य समाज के पास है। हमारे पास ज्ञान तो है, कर्म नहीं, संगठन नहीं।

अत: आपसे अनुरोध है कि आप एक वर्ष आर्य समाज के संगठन को दें। आप अपने साथियों, मित्रों और शिष्यों के साथ भारत का भ्रमण करें। आपको इस महान कार्य के लिये बहुत सहयोगी मिलेंगे जो आर्य समाज की वर्तमान दुर्दशा से व्यथित हैं। एक बार जब आप चल पड़ेंगे तो आप देखेंगे कि श्री मिठाईलाल सिंह, श्री आनन्द चौहान, चौधरी हरी सिंह, श्री आनन्द आर्य, श्री अनिल आर्य, उत्तराखंड के श्री भंडारी, श्री रामसिंह, श्री विरजानन्द, श्री दीक्षेन्द्र आर्य, सुश्री प्रवेश एवं पूनम सैकड़ों नर-नारियां आपके कारवां में होंगे। हम महाकवि जयशंकर प्रसाद के संदेश को सुने-

शक्ति के विद्युत्कण जो व्यस्त विकल बिखरे हैं हो निरुपाय
समन्वय उनका करें समस्त विजयिनी मानवता हो जाए

किसानों के लिए भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह की रोंगटे खड़े करने वाली शौर्य गाथा

सरदार किशनसिंह की इस संगठन-शक्ति का एक नमूना 1924 में भी सामने आया। अच्छा घुड़सवार जैसे घोड़े को काबू में कर लेता है, वे तूफान को काबू में कर लेते थे। उनमें नेता के, संगठन के दोनों गुण थे। वे स्वयं रात-दिन काम करते थे और दूसरों को काम में जुटाने की और उनसे अपने मन का काम लेने की तरकीब जानते थे। सरकार ने आबियाना (पानी का कर) बढ़ा दिया। एक तो टैक्स देना वैसे ही किसी को अच्छा नहीं लगता था, फिर उन दिनों किसान टूटी हुई जिन्दगी जी रहे थे। सब में असंतोष था, गुस्सा था, पर जनता का असंतोष और रोष तो बिजली है। कोई तार के द्वारा उसे बल्ब तक पहुंचाये, तो रोशनी कैसे हो?

यह काम सरदार किशनसिंह का था। उन्होंने तुरन्त जमींदार लीग की स्थापना की आबियाने का विरोध करने के लिए। पंजाब में किसान ही जमींदार थे। एक जलसा किया। जलसों के इतिहास में यह जलसा अपने स्वरूप और परिणाम दोनों दृष्टियों से अनुपम था। जलसे के पण्डाल में प्रवेश में पाने के लिए एक आना टिकिट रखा गया था। इस एक आने से सात हजार रुपये इकट्ठे हो गए, या यों कहें कि एक लाख बारह हजार लोग इस जलसे में शामिल हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकार ने यह टैक्स वापस ले लिया - लगाया ही नहीं। उस समय अंग्रेज सरकार अपनी हर बात को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लेती थी और जनता की हर मांग को विद्रोह समझती थी। इस स्थिति में उस का बड़ा कदम, साधारण दबाव से तो पीछे नहीं हट सकता था।

वे संघर्ष के पुजारी थे। बाहर रहते भी उनका संघर्ष जारी रहता था और जेल में रहते भी। जेल का नाम सदा ही नरक की याद दिलाने वाला है, पर उस समय तो जेल सचमुच नरक का ही रूप था। अब तो कैदी लम्बी-चौड़ी बैरकों में रहते हैं। मतलब यह कि ताला बैरक के दरवाजे पर लगता है। कैदी उसके भीतर घूमने-फिरने में स्वतंत्र हैं। उस युग में यह बात न थी। कैदी की बर्थ (कब्रनुमा चबूतरा) के ऊपर लोहे का कब्र के ही साइज का पिंजरा रहता था। कैदी उसमें लेट तो सकता था, पर बैठते समय उसे सिर इतना झुकाना पड़ता था कि उठे हुए घुटनों से लगा रहे। इतना ही काफी नहीं समझा जाता था। कैदी के पैर में पड़े लोहे के कड़े में डाल कर लोहे की एक जंजीर उस पिंजरे के चौखटे के साथ जुड़ी रहती थी। एक भैंसे को काबू में रखने के लिए भी जिस बांध-जूड़ की जरूरत नहीं है, एक साधारण कैदी को उस बांध-जूड़ में रखा जाता था। कैदी का भी कोई अधिकार है, यह कहना तो प्रलय मचाना ही माना जाता, जबकि कुछ मांगना भी उसका अधिकार न था।

उस दिन जेलों के इतिहास में हड़कम्प मच गया, जब सरदार किशनसिंह ने उस जंगले में बन्द होने से इनकार कर दिया। छोटे जेलरों और उनके साथ प्रबन्ध में साझीदार कैदी-वार्डरों के घूंसे-डण्डे एक साथ उठे। ऐसा लगा कि कुछ क्षणों में सरदार किशनसिंह की हड्डियां काफी मुलायम हो जाएंगी, पर समझदार जेलर ने उन्हें रोका- ''जो अंग्रेज लाटसाहब से नहीं दबता, तुमसे दब जाएगा?'' उन्हें बैरक से हटाकर कालकोठरी में रख दिया गया, पर क्या संघर्ष समाप्त हुआ? यह कैसे हो सकता था? अन्याय के सामने सिर झुकाना सरदार किशनसिंह के स्वभाव के विरुद्ध था और जेल में न्याय के घुसने की मनाही थी। आज इस बात पर, तो कल उस बात पर, टक्कर होती ही रहती थी। एक जेल-आंदोलन तो जेलों के इतिहास में स्मरणीय हो गया। इसे उन्होंने धर्म का रंग दे दिया था।

कैदी को सिर पर ओढ़ने के लिए टोपी मिलती थी। सरदार किशनसिंह ने टोपी लेने-ओढ़ने से इनकार कर दिया और पगड़ी की मांग की। यह तो जेल में क्रांति ही ही थी। जो कभी नहीं हुआ, वह करने की मांग कर रहा था एक कैदी। फिर एक ही सिख तो कैदी नहीं था जेलों में। उस समय एक की मांग मानने का अर्थ था जेलों के

सरदार किशन सिंह

सब कैदियों को वही मांग करने के लिए प्रोत्साहित करना। ''जेलों का प्रबन्ध कैदियों की इच्छा के अनुसार नहीं, हमारी इच्छा के अनुसार होगा।'' यह जेल अफसरों की गर्व घोषणा थी, पर सरदार किशनसिंह तो अपनी इच्छा के पीछे सेचलने वाले थे, दूसरों की इच्छा पर चलने वाले नहीं। यही नहीं, उन में तो ऐसी संगठन-शक्ति थी कि वे दूसरों को भी अपनी इच्छा के पीछे चलने को प्रेरित कर देते थे। वे जेल में बन्द थे, उनकी हर बात पर पाबन्दी थी, अंग्रेज सरकार की उन पर निगाह थी, पर क्रांतिकारी ही क्या जो पाबंदियों के सामने सिर झुकाए। पाबन्दियों की हिमानी चट्टानों के बीच उन्होंने अपने संगठन-कौशल के डायनामाइट से ऐसी सुरंगें बनाईं कि दूसरी जेलों में भी पगड़ी की मांग खड़ी हो गई और लाहौर की बोर्स्टल जेल में तो वह एक आंदोलन ही हो गया।

''इस कैदी की बात, दूसरे कैदियों तक कैसे पहुंची और उस जेल की बात दूसरी जेलों में कैसे गई? तुम जेल चलाते हो या कोई सराय?'' जेल के अफसरों पर अंग्रेज इंस्पेक्टर जनरल की लताड़ पड़ी, तो वे गरमाए। अब उन की खैर इसी में थी कि वे आंदोलन को कुचल देने की रिपोर्ट ऊपर भेज सकें। उन्होंने सरदार किशनसिंह को तरह-तरह से समझाया, धमकाया, डराया पर सरदार किशनसिंह उस धातु के कहां बने थे, जिस पर इन बातों का असर पड़ता है? अफसर भिन्ना उठे। उन्होंने सरदार किशनसिंह को नंगा करके बेंत लगाने की टिकटिकी पर धूप में बांध दिया। तेज गरमी का मौसम, नंगा शरीर, बंधे हुए हाथ-पैरों से खड़े रहने की टिकटिकी पर लटके रहने की थकान, सब के सामने नंगे होने की झेंप, साथ ही हर घड़ी बढ़ती भूख-प्यास- किसी को भी आत्महीन करने के लिए काफी है। जेल का जो भी कर्मचारी पास से निकला, उसी ने उन्हें झिड़का, धमकाया और जो भी कैदी निकला, उसने हमदर्दी से समझाया- ''सरदार जी, यहां के अफसर राक्षस हैं। उन पर किसी बात का असर नहीं पड़ सकता। वे किसी को मारकर भट्टी में झोंक दें और लिख दें कि कैदी निमोनिए से मर गया, तो कौन उनकी पूंछ पकड़ता है। जिद छोड़ दो, अपने बीवी-बच्चों का ध्यान करो, जान से मत खेलो।''

बात ठीक थी, पर सरदार किशनसिंह राह से गिराने वाली धमकियों और राह भटकाने वाली हमदर्दियों के दबाव और बहकावे में आने वाले कहां थे? मौत का दबाव और सुख-समृद्धि-भरी जिन्दगी का लुभाव जिसे प्रभावित नहीं करता, उसे कौन-सा त्रास है जो डरा दे? वे खाल जलाती धूप में दिन-भर बंधे खड़े रहें और जब भी उन से पूछा गया- ''हुआ दिमाग ठण्डा? बात मानते हो, तो खोल दें तुम्हें?'' उनका जवाब था : ''बात मेरी न्यायपूर्ण है, तुम्हारी नहीं। मैं तुम्हारी बात कैसे मान सकता हूं?''

सूरज ने जेल के अफसरों का खूब साथ दिया। उन से भी ज्यादा आग सूरज ने सरदार किशनसिंह पर बरसाई, पर उन पर उसका भी कोई असर न पड़ा, तो वह झेंप कर आड़ में जाने को ढल चला। जेल के अफसर उसे साथ छोड़ते देखकर उबल पड़े और उन्होंने सरदार किशनसिंह पर बेंत बरसानी शुरू कीं, पर किशनसिंह वहां कहां थे? वहां तो भारत बंधा हुआ था। उन्हीं के शब्दों में- ''मुझे उस समय अपनी कोई याद न आ रही थी, न कोई परेशानी ही। मैं जानता थ कि भारत गुलाम है और उस गुलामी को तोड़ने के लिए मैं जूझ रहा था, पर जानना और बात और महसूस करना और बात। इस समय मैं अपने मुल्क की गुलामी को महसूस कर रहा था, क्योंकि मैं देख रहा था कि कोई हैसियत और औकात न रखने वाले टुच्चे जेल-कर्मचारी देश के किसी भी नागरिक को अपमानित और पीड़ित करने का दम रखते हैं। मुल्क के हाथ-पैरों में गुलामी की जंजीरों से जो जकड़न है, उसे मैं अपने हाथ-पैरों में महसूस कर रहा था। मुझे लग रहा था कि उस जकड़न से मैं टूटा जा रहा हूं।''

बेंत की टिकटिकी से खुलकर अक्सर आदमी गिर पड़ता है, क्योंकि जेल की बेंत इस राक्षसी ढंग से मारी जाती है कि नस-नस सुन्न पड़ जाती है। सरदार किशनसिंह भी खुलते ही गिर पड़े, पर यह गिरना कमजोरी का नहीं, फालिज के आक्रमण से गिरना था- हां उन पर फालिज का आक्रमण हो गया था। इससे हम समझ सकते हैं कि उन घड़ियों में उन्होंने क्या कुछ सहा था। पर तन के टूटने पर भी क्या उनका मन टूटा? नहीं, तन उनका टूटा, पर मन टूटा अंग्रेजी सरकार का। जेलों में पगड़ी का आंदोलन पूरे जोर से भड़क उठा, सरकार को झुकना पड़ा और उसने सिख कैदियों को ढाई गज का परना देने की बात मान ली। क्या यह एक ऐतिहासिक सत्य नहीं है कि जेल-सुधार का जो आंदोलन अंडमान जेल में रामरक्षा और इन्दुभूषण की, रंगून जेल में उत्तमा फुंगी विजय की और लाहौर जेल में यतीन्द्रनाथदास की आहुति लेकर सफल हुआ, उसके आदि प्रवर्तक सरदार किशनसिंह ही थे। अंग्रेजी सरकार के शैतानी किले की फौलादी दीवारों पर पहला हथौड़ा उन्होंने ही मारा था। फालिज होने से वे छोड़ दिए गए। सरकार के डॉक्टरों की रिपोर्ट थी कि अब वे बेकार हो गए हैं, पर दिल्ली रहकर चिकित्सा कराने से वे स्वस्थ हो गए, यह उनकी इच्छाशक्ति का चमत्कार था।

गो वध, पशु वध एवं बूचड़खानों के विरुद्ध कूका आंदोलन की रोमांचक गाथा

मोदी सरकार ने गो वध और पशु वध पर प्रतिबंध लगा दिया है। भारतवर्ष का पूर्वोत्तर भाग- मेघालय, नागालैण्ड, मणिपुर- इसके विरुद्ध आवाज उठा रहा है। केरल के सिरफिरे लोग और पथभ्रष्ट राजनीतिज्ञ मोदी की इस नीति का प्रबल विरोध कर रहे हैं और खुलेआम गौ मांस की पार्टियां दे रहे हैं। हमारे देश के तथाकथित बुद्धिजीवी और अंग्रेजी अखबारों के सम्पादकीय इस नीति की प्रखर आलोचना कर रहे हैं। उनका तर्क है कि बूचड़खाने बंद होने से लाखों लोग बेरोजगार हो जाएंगे। कम से कम वैध बूचड़खाने को तो चलने दिया जाए। कुछ विद्वान कुतर्क देते हैं कि क्या खाने-पीने की आजादी को छीना जा सकता है। यह संविधान विरुद्ध है। राजनीतिक कारणों से मोदी सरकार भी कहीं-कहीं समझौता करने के लिए तैयार है।

आर्य जगत को इस बात की प्रसन्नता है कि पशु वध पर प्रतिबंध लगाकर मोदी सरकार ने आजादी के 70 साल बाद दयानन्द की आवाज को सुना। गो वध और पशु वध के विरुद्ध महर्षि दयानन्द ने गोकरूणानिधिः में अपनी पीड़ा को व्यक्त किया था और उस पीड़ा को मोदी सरकार ने सुना। महर्षि लिखते हैं- बड़े आश्चर्य की बात है कि पशुओं की पीड़ा न होने के लिये न्याय पुस्तक में व्यवस्था भी लिखी है कि पशु दुर्बल और रोगी हों, उनको कष्ट न दिया जावे और जितना बोझ सुख पूर्वक उठा सकें, उतना ही उन पर धरा जावे।

श्रीमती राजराजेश्वरी श्री विक्टोरिया महारानी का विज्ञापन भी प्रसिद्ध है कि इन अव्यक्तवाणी पशुओं को जो-जो दुःख दिया जाता है वह-वह न दिया जाये, तो क्या भला मार डालने से भी अधिक कोई दुःख होता है? क्या फांसी से अधिक दुःख बंदीगृह में होता है? जिस किसी अपराधी से पूछा जाय कि तू फांसी पर चढ़ने में प्रसन्न है वा बंदीघर में रहने में? तो वह स्पष्ट कहेगा कि फांसी में नहीं, किन्तु बन्दीघर के रहने में।

और जो काई मनुष्य भोजन करने को उपस्थित हो उसके आगे से भोजन के पदार्थ उठा लिये जावें और उसको वहाँ से दूर किया जाये, तो क्या वह सुख मानेगा? ऐसे ही आज कल के समय में कोई गाय आदि पशु सरकारी जंगल में जाकर घास और पत्ता जो कि उन्हीं के भोजनार्थ है बिना महसूल दिये खावें वा खाने को जावें, तो बेचारे उन पशुओं उनके स्वामियों की दुर्दशा होती है। जंगल में आग लग जावे तो कुछ चिंता नहीं, किन्तु वे पशु न खाने पावें। हम कहते हैं कि किसी अति क्षुधातुर राजा वा राजपुरुष के सामने आये चावल आदि वा डबलरोटी आदि छीनकर न खाने देवें और उनकी दुर्दशा की जावे, तो जैसा दुःख इनको विदित होगा, क्या वैसा ही उन पशु-पक्षियों और उनके स्वामियों को न होता होगा?

ध्यान देकर सुनिये कि जैसा दुःख-सुख अपने को होताहै, वैसा ही औरों को भी समझा कीजिये। और यह भी ध्यान में रखिये कि वे पशु आदि और उनके स्वामी तथा खेती आदि कर्म करने वाले प्रजा के पशु आदि और मनुष्य के अधिक पुरुषार्थ ही से राजा का ऐश्वर्य अधिक बढ़ता और न्यून से नष्ट हो जाता है, इसीलिये आज तक जो हुआ सो हुआ (आगे) आंखें खोलकर सबके हानिकारक कर्मो को न कीजिये और न करने दीजिये। हाँ हम लोगों का यही काम है कि आप लौगों को भलाई और बुराई के कामों को जता देवें, और आप लोगों का यही काम है कि पक्षपात छोड़ सब की रक्षा और बढ़ती करने में तत्पर रहें। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर हम और आप पर पूर्ण कृपा करें कि जिससे हम और आप लोग विश्व के हानिकारक कर्मों को छोड़ सर्वोपकारक कर्मों को करके सब लोग आनन्द में रहें। इन सब बातों को सुन मत डालना, किन्तु सुन रखना। इन अनाथ पशुओं के प्राणों को शीघ्र बचाना।

हे महाराजाधिराज जगदीश्वर! जो इनको कोई न बचावे तो आप इनकी रक्षा करने और हमसे कराने में शीघ्र उद्यत हूजिये।

1857 में जब भारत अंग्रेजी दासता की कब्र खोदने के लिए छटपटा रहा था, पंजाब की शस्य-श्यामला उर्वरा भूमि में एक नया बीज अंकुरित हो रहा था। आगे चल कर यह बीज 'नामधारी' संगठन के नाम से इतिहास में प्रसिद्ध हुआ। यों तो यह संगठन काफी पुराना था किन्तु बदलते संदर्भ को सही अभिव्यक्ति देने का श्रेय बाबा रामसिंह को जाता है जिन्होंने महाराजा रणजीत सिंह की सेना में रहते अंग्रेजों द्वारा स्वाधीनता का निर्मम अपहरण होते हुए देखा था।

इस वीभत्स काण्ड का विश्लेषण करते हुए वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि खालसा राज का पतन धार्मिक एवं राजनैतिक नेतृत्व की विसंगतियों, भ्रष्टता और दौर्बल्य के कारण हुआ है और इसका प्रभाव सामान्य जनता को भी अपने में लपेटता जा रहा है। इस स्थिति से निपटने के लिए बाबा रामसिंह ने न तो खालसा पंथ की कट्टरता का स्पर्श किया और न हिन्दू धर्म के अंधविश्वासों से नाता जोड़ा।

अस्पृश्यता के वे घोर विरोधी थे, किन्तु खान-पान में स्वच्छता के समर्थक थे। मूर्ति-पूजा, कब्रपरस्ती तथाअन्य कर्मकाण्डों का जहाँ उन्होंने खण्डन किया, वहाँ गो-रक्षा और हवन का मण्डन किया। धूम्रपान-मदिरापान-मांसाहार-विलासिता और व्यभिचार जैसी चारित्रिक पतन की बातों को त्यागने का उन्होंने उपदेश दिया। उन्होंने खर्चीले विवाहों का निषेध और विधवा विवाह का समर्थन किया। उन्होंने मंदिरों और गुरुद्वारों में पनप रहे गुरुडम को रोकने का प्रयास किया। अंग्रेजी शासन की स्थापना पर उन्होंने स्वाधीनता की अलख जगाते हुए विदेशी डाक-व्यवस्था, विदेशी शिक्षा-पद्धति, विदेशी सरकार की नौकरी, विदेशी-न्यायालयों का बहिष्कार करने की प्रेरणा दी।

इन बातों का सहज परिणाम यह निकला कि हजारों लोग उनके अनुयायी बन गए जो 'कूका' कहलाएं। बाबा रामसिंह इतने लोकप्रिय हुए कि उनके गुरु बाबा बालक सिंह को उनके अनुयायी ग्यारहवाँ गुरु और स्वयं बारहवाँ गुरु मानने लगे।

बाबा रामसिंह की इस बढ़ती लोकप्रियता से चिढ़ कर उनके कुछ विरोधी, जो कि पौराणिकता के अलम्बरदार थे, सरकार के कान भरने लगे। उन्होंने प्रचार किया कि कूका आंदोलन ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध एक गहरा षड्यंत्र है।

कुछ उत्साही कूका और बेरोजगार सैनिक जो इस आंदोलन में कूद पड़े थे, वे कभी-कभी अपने दीवानों में सरकार विरोधी भाषण दे देते थे। इंस्पेक्टर जनरल पुलिस की 27 जून 1863 की एक रिपोर्ट में टिप्पणी देते हुए सरकार के सचिव टी.डी. फोरसाइथ ने 30 जून को लिखा था कि बाबा रामसिंह की बातें निर्दोष और अच्छी हैं किन्तु उनके नाम पर ऐसी बातें फैलाई जा रही हैं जो सरकार के विरुद्ध जाती हैं। भाई रामसिंह के इरादे कुछ भी हों, किन्तु उनके दीवानों में दिए गए उपदेशों ने लोगों के मन हिला दिये हैं और आगामी दीवाली पर उपद्रव होने का खतरा है, अतः उन्हें नजरबन्द कर दिया जाए और उनकी गतिविधियों पर दृष्टि रखी जाए।

बाबा रामसिंह की नजरबन्दी के दौरान उनके जोशीले अनुयायियों ने गुस्से में आकर फिरोजपुर, लुधियाना, स्यालकोट, गुजराँवाला व होशयारपुर में बनी अनेक बुजुर्गों की समाधियाँ, पीरों की कब्रें और खानगाहें, गूगे की मढ़ियाँ और मंदिरों की बाहरी मूर्तियाँ तोड़-फोड़ कर साफ कर दीं। इस अपराध में अनेक कूके दण्डित हुए। चूँकि यह मामला धार्मिक था, अतः सरकार ने सख्ती बरतना उचित नहीं समझा।

इसी दौरान कुछ कूके देशी राजाओं की फौज में भरती हो गए और अमृतसर, रामकोट आदि सीनों पर उन्होंने उन कसाइयों को मार डाला जो खुले आम गोवध करते थे। सन् 1870 में बाबा रामसिंह ने अपने दूत नेपाल, अवध, हैदराबाद और अन्य रियासतों में भी भेजे, जिसके कारण का पता तो न चला, पर सरकार के कान खड़े हो गए।

1849 में सरकार ने गोवध पर लगा प्रतिबंध उठा लिया था जिससे जनता में रोष था। 14 जून 1870 को स्वर्ण मंदिर के पास स्थित एक बूचड़खाने पर हमला करके कूकाओं ने चार कसाइयों को मार डाला। 14-15 जनवरी को 1871 को मलेरकोटला के बूचड़खाने पर आक्रमण किया गया। ऐसा ही मामला 16 जुलाई 1871 को रामकोट के कसाइयों पर हुआ जिसमें तीन कसाई मारे गए। मलेरकोटला व मलौट के 47 अपराधी कूकाओं को बिना उन पर मुकदमा चलाए तोप के मुँह पर बाँध कर उड़ा दिया गया परंतु इन राष्ट्र भक्त कूकाओं ने जिस बहादुरी से अपना बलिदान दिया वह धर्म और राष्ट्र के इतिहास में अभूतपूर्व है

कसाइयों की हत्या करने वाले इन गोभक्तों का पुलिस पता नहीं लगा सकी। परन्तु उन्होंने कानून का उल्लंघन किया था और हिंसा की थी, इसलिए गुरु रामसिंह ने भरी संगत में हत्या करने वालों से धर्म के नाम पर अपील की कि जिन्होंने हत्या की है, वे स्वयं खड़े होकर अपना अपराध कबूर करें और फिर सरकार के सामने आत्म-समर्पण करें।

अपने गुरु के प्रति निष्ठा कहिए, धर्म के सही स्वरूप के प्रति आस्था कहिए- एक-एक करके कसाइयों की हत्या करने वाले भक्तजन खड़े होते गए और बाद में उन्होंने स्वयं को पुलिस के हवाले कर दिया।

कोई आक्रोश नहीं, कोई प्रतिरोध नहीं, कोई शिकायत नहीं।

बारी-बारी से तोप से बांध कर उन्हें उड़ा दिया गया। इन अनाम शहीदों का बलिदान क्या गुरु अर्जुनदेव और गुरु तेगबहादुर के बलिदान से किसी भी प्रकार कम है?

पर अंग्रेज-भक्ति की सिख मानसिकता ने कभी इन बलिदानों को गौरव से मंडित नहीं करने दिया। बल्कि बाद में ऐसे सिख भी पैदा हो गए जो गायों के सिर काट कर मंदिरों में फेंकने लगे।

कहाँ ये बलिदानी, साहसी गोभक्त और राष्ट्रभक्त कूके, कहाँ भिंडरावाले के डरपोक अनुयायी- जो अपराध करके अकाल तख्त में जाकर छिप जाते थे।

और फिर कहाँ भिंडरावाले और कहाँ रामसिंह!

बाबा रामसिंहस इस प्रकार बूचड़खाने तोड़ने के विरुद्ध थे किन्तु लगता है उनके आंदोलन को बदनाम करने और सरकार को उनके विरुद्ध भड़काने के लिए कुछ अवसरवादी शरारती तत्व कूकाओं में आ मिले थे। बाबा निर्दोष थे किन्तु उनके डेरे की तलाशी ली गई। वहाँ कोई आपत्तिजनक चीज नहीं मिली। किन्तु फिर भी उन्हें गिरफ्तार कर इलाहाबाद और वहाँ से रंगून भेज दिया गाय, जहाँ 18 नवम्बर 1884 को उनका देहान्त हो गया।

इतिहास के इस स्वर्णिम पृष्ट के सम्बन्ध में 'हिन्दुस्तान' (29-8-83) में बाला दुबे ने लिखा है :

''द्वितीय सिख युद्ध के बाद ही अंग्रेज अपनी असलियत पर आने लगे थे। गायें धड़ाधड़ काटी ही नही जा रही थी बल्कि उनका मांस खुलेआम डलियों में रखकर गली-गली बेचा जाने लगा था। अमृतसर में हाहाकार मच गया था। सिखों के थरथराते हाथ अपनी तलवारों पर जा पड़े, हिन्दू उन्हें सहायता देने आ पहुंचे। सनसनी फैलते ही अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर एफ.एन. बर्च ने 15 मई 1871 को अपने कमिश्नर को लिखा- 'हिन्दू और सिख गायों के काटे जाने पर रोष प्रकट कर रहे हैं।' पर मदान्ध अंग्रेज कमिश्नर ने इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया। वे दिन घोर अग्नि परीक्षा के थे। हिन्दू और सिख नेताओं को अंग्रेजों ने जेलखानों में डाल रखा था - दीवान मूल राज, राजा छतर सिंह, राजा शेर सिंह और दीवान बूटा सिंह सभी वीर बंद थे। और जिस दिन भाईदेवा सिंह ने गाय की हड्डी पवित्र हर मंदिर साहब के आंगन से उठाकर सिंह को दिखलाई तो वे अपनी मांदों से दहाड़ते हुए निकल आए। हिन्दू और सिखों ने 14 और 15 जून 1871 को अमृतसर के कसाइयों पर कटकटा कर हमला कर दिया। प्यारा, जीवन, शादी, अमामी-चारों उद्दंड कसाई मारे गए और करम दीन, इलाही बख्श और खीवा को अधमरी अवस्था में छोड़ दिया।

वीर कूका सिखों ने सिर पर कफन बांध लिए। वे मौत को गले लगाने को बेताब हो रहे थे। जब अंग्रेजों ने पकड़ा-धकड़ी की तब वीर बेहल सिंह, फतह सिंह, हाकिम सिंह और लहना सिंह ने हंसते-हंसते फांसी के फन्दे अपनी गर्दनों में ऐसे पहने मानो वे फूलों की माला पहन रहे हों। फांसी के तख्ते पर जाने से पहले उन्होंने हर मंदिर साहब के पवित्र तालाब में स्नान किया, फिर प्रसाद पाया और फिर कीर्तन करते हुए वे हिमायती सिंहों की गर्जना 'सत श्री अकाल' के बीच कितने तेजस्वी लगे थे। पर उनका व्रत टूटा नहीं, उनका संकल्प डगमगाया नहीं। शहीदों का खून रंग लाया और वे फिर दुगने जोश से खड़े हो गए। अबकी बार वे 15 जुलाई 1871 के दिन लुधियाना के पास रायकोट के बूचड़खाने पर क्रुद्ध ततैयों की तरह टूटे थे। अंग्रेजों ने रायकोट के गुरुद्वारा के ऐन बगल में गायें काटने का बूचड़खाना बनवाया था। उन्होंने दो कसाईयों को मार डाला और सात को घायल कर दिया। एक बार फिर वीर कूका सिखों का मस्ताना दल हंसी-खुशी फांसी के तख्ते पर चढ़ गया। गुरमुख सिंह, मस्तान सिंह और मंगल सिंह को बूचड़खाने के बाहर पुांसियाँ दी गईं। ज्ञानी रतन सिंह (मंडी वाले) ज्ञानी रतनसिंह (नाईवाल वाले) दोनों रतनसिंहों के अनूठे जोड़े को 26 नवम्बर को जेल के निकट फांसी दी गई थी। मण्डी के ज्ञानी रतन सिंह ने शहीद होने से पहले पास खड़े अंग्रेज अफसर से चिल्लाकर कहा था- 'मैं किसी जाट माता की कोख में रहकर दस महीने बाद फिर तुझसे बदला लेने आऊंगा। तुम्हारे दिन आ गए हैं। हम बार-बार पैदा होंगे और तलवार पकड़ेंगे और तब तक चैन से नहीं बैठेंगे जब तक तुम्हारा नाश नहीं कर देंगे।' इसके बाद लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर कावन ने सारा दोष वीर कूका सिखों के गुरु रामसिंह जी के सिर पर थोपना चाहा पर उन पर हाथ बढ़ाना इतना सरल नहीं था।

तभी कूका सिखों को खबर लगी कि मलेरकोटला में हिन्दुओं और सिखों को जबरन खड़ा करके उन्हीं के सामने गायें काटी गई हैं। तभी माघी मेला भी आ पड़ा जहां देखते ही देखते 500 हिन्दू और सिख भैनी साहब में जमा होकर अपने-अपने सिरों पर कफनी बांधकर तैयार हो गए। सरदार हीरा सिंह ऐसे दहाड़े थे मानो घायल होने पर सिंह बेकाबू होकर झपटा है। उन्होंने संकल्प यात्रा से पहले गुरु रामसिंह के लंगर में परसाद छका और फिर सरदार हीरा सिंह ने अपनी तलवार से धरती के सीने पर एक लक्ष्मण-रेखा खींचते हुए कहा- 'जो अपना सिर देने को तैयार हों वे ही 'सरदार' इस लक्ष्मण रेखा को फलांगें।' देखते-देखते 140 सिंह मौत से नाता जोड़ने आ खड़े हुए। फिर मलोट होते हुए सरदार हीरासिंह के वे नायब हीरे मलेरकोटला की ओर बढ़े। मलेरकोटला रियासत के अफसर भी गाफिल नहीं थे। उन्हें पता लग चुका था कि मस्तानों की बारात मलेरकोटला में चढ़ने को आतुर है और उन्होंने भी वैसी ही तैयारी कर ली थी।

15 जनवरी 1872 को वीर कूका दल चिड़िमार मुहल्ले की उस गली पर टूटा था जहां कसाई-ही-कसाई रहते थे। उधर मलेरकोटला की सेना एवं पुलिस उनसे दस गुना ज्यादा नफरी में पहले से ही इकट्ठी हो चुकी थी। रियासत के सिपाहियों के पास तलवारें और बन्दूकें भी थीं। अपने से दस गुने ज्यादा सैनिक देखकर कूका वीर दल और भी भड़क उठा। फिर जीवन का मोह त्याग कर वे ऐसे टूटे जैसे लहलहाते खेत पर टिड्डी दल टूटताहै। खनखन तलवारें बज रही थीं। गोलियों की धांय धूं अलग कानों के पर्दे फाड़े डाल रही थीं। बड़ी भयंकर लड़ाई हो रही थी चिड़िमार मोहल्ले की उस संकरी-सी गली में। और जब लड़ाई के दौरान मलेरकोटला के एक अफसर ने कूका गुरमुख सिंह की आंखों के सामने ही एक बैल को काटा तो गुरमुख सिंह भूखे बाज की तरह उस अफसर पर झपटा और एक ही हाथ में उसका सिर धड़ से बिल्कुल ही अलग कर दिया। काश कि कूका वीरों के पास भी उस दिन बन्दूकें होतीं। अपनी तलवारों से ही उन्होंने रियासत के आठ सिपाही मार डाले और चार को सख्त घायल कर दिया। उनके सात वीर खेत रहे और दो घायल हुए। तीर बार झपटे वे कूकावीर और फिर रिसायत के सिपाहियों को खदेड़ते हुए वे आगे बढ़चले। पर तभी अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर कावन की भेजी हुई कमुक भी आ पहुंची। जो कूका निकल चुके थे, वे सरहद पार कर गए पर कुछ जिद्दी वीर भी थे जो अपनी सलीबों से गले लगने को बेताब थे। उस दिन 68 कूका वीर पकड़े गए जिन्हें पटियाला के नायब नाजिम ने अमरगढ़ के किले में बंद किया था। फिर 16 जनवरी 1872 को उन्हें कावन को सौंप दिया गया। दांत पीसता हुआ अंग्रेज कमिश्नर उन्हें 17 जनवरी को मलेरकोटला के परेड ग्राउण्ड पर लाया था। 49 कूका वीर मुस्करा रहे थे। उनके बीच माता खेमकौर का 12 वर्षीय इकलौता बेटा भी था जिसे देखकर डिप्टी कमिश्नर ककावन की पत्नी ने पसीज कर उसे क्षमा-याचना दिलवाने की सिफारिश अपने पति से की थी। कावन पुिर उस वीर शेर के बच्चे से बोला- 'अगर तू यह कह दे कि तू सतगुरु राम सिंह का सिख नहीं है तो तुझे छोड़ दिया जाएगा।' यह सुनते ही बारह वर्ष का वह अग्नि-पुत्र चिल्लाता हुआ लपका और डिप्टी कमिश्नर कावन की दाढ़ी पकड़ कर उखाड़ने लगा। उसने दाढ़ी तभी छोटी जब कावन के सिपाहियों ने उसके तलवारों से टुकड़े-टुकड़े कर डाले। फिर नौ ताप मैदान में खड़ी की गईं। सैकड़ों लोग यह वीभत्स कांड देखने जमा हो गए थे। जब कूका वीरों को तोपों से बांधने की कोशिश की गई तब वे बोले- 'हम बंधना नहीं चाहते और न ही पीठ देकर खड़ा होना चाहेंगे। हम अपने सीने पर तुम्हारी तोप के दहानों से सटाकर खड़े होंगे।' और वे मुस्कराते हुए टुकड़े-टुकड़े हो गए। 49 कूका वीर तोपबम बने थे।

कावन ने अपने वरिष्ठ अफसर कमिश्नर फोरसाइथ को यह सजा मंजूर करने के लिए लिखा भी था। उसका निर्णय आने से पहले ही उसने सात कूका सिखों को तोप-बम कर दिया। जब कमिश्नर ने उसे पत्र लिखा कि उसके आने से पहले कुछ भी नहीं किया जाए, तब मिस्टर कावन ने उक्त पत्र की अवहेलना करते हुए उसे अपनी जेब में डाल लिया और कूका संग्रामियों को तोपों से उड़वाता रहा। कावन ने फिर कुछ और कूका वीरों को पकड़ा था और कमिश्नर को लिखा था- 'इन्होंने खुली बगावत की है और इन्हें सख्त-से-सख्त सजा मिलनी चाहिए जो औरों के लिए इबरत भी हो।' कमिश्नर फारसाइथ भी अपने कैंचुली छोड़कर निकल आया और आज्ञा दी कि इनसब को सजाए मौत दी जाए। सोलह कूका संन्यासियों को फिर तोपों से उड़वाया गया। उनमें से एक कूका वरयामसिंह ठिगने कद का था जो तोप के मुंह तक नहीं पहुंच पाता था। यह देखकर कावन ने कहा- इसे छोड़ दिया जाए। पर वरयामसिंह ने फौरन ही इधर-उधर पड़ी ईंटें इकट्ठी कीं और उन्हें लगाकर उन पर खड़ा हो गया। अब तोप का खुला हुआ मुंह उसके सीने से सट गया था। वरयामसिंह चीखा, 'सत श्री अकाल', और फिर टुकड़े-टुकड़े होकर ऊपर हवा में बिखर गया।

पंजीयन संख्या RAJHIN(RNI)/2000/2567
डाक पं. सं. JaipurCity/250/2015-17

किसान महापंचायत की श्रद्धांजलि सभा

जब तक किसानों का शासन नहीं होगा तब तक किसानों पर दमन होता रहेगा

–सत्यव्रत सामवेदी

जयपुर 21 जून। किसान महापंचायत द्वारा जयपुर में कलक्ट्रेट के बाहर मंदसौर में पुलिस की गोली से मारे गए छह किसानों की श्रद्धांजलि सभा को सम्बोधित करते हुए सत्यव्रत सामवेदी ने कहा कि किसान अपने शोषण के विरुद्ध सदियों से लड़ रहा है परंतु आजादी के 70 साल बाद भी उसका दमन समाप्त नहीं हुआ और यदि दमन के विरुद्ध किसान खड़ा होता है तो उसे गोलियों से भून दिया जाता है। 19वीं शताब्दी में महर्षि दयानन्द ने किसानों की समस्या को उठाया था और एक संगठन बनाया था जिसका नाम रखा था गोकृष्यादिरक्षिणीसभा। वे किसान को भारतवर्ष का सम्राट मानते थे। महर्षि दयानन्द की प्रेरणा से उनके क्रांतिकारी अनुयायी पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल ने किसानों की आवाज उठाते हुए कहा–

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है,
अब न वो जलजले हैं, न अरमानों की भीड़
एक मिट जाने की हसरत बस दिले बिस्मिल में है
वक्त आने दे तुझे बता देंगे ऐ आसमां
हम अभी से क्या बताएं क्या हमारे दिल में है

आज भारतवर्ष का किसान सरफरोशी की तमन्ना लिये हुए हजारों साल की गुलामी से मुक्ति पाने के लिए सड़कों पर आ गया है। 19 दिसम्बर 1927 को फांसी से पहले क्रांति शिरोमणि पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल ने देश के नाम संदेश में लिखा था- यदि एक किसान को जमींदार की मजदूरी करने या हल चलाने की नौकरी करने पर ग्राम में आज से 20 वर्ष पूर्व दो आने रोज या चार रुपए मासिक मिलते थे तो आज भी वहीं वेतन बंधा चला आ रहा है। 20 वर्ष पूर्व अकेला था अब उसकी स्त्री तथा चार संतान भी हैं पर उसी वेतन में उसे निर्वाह करना पड़ता है, उसे उसी पर सं[illegible] पड़ता है, सारे दिन [illegible]ठ की लू तथा धूप में गन्ने [illegible] पानी देते-देते उसको रतौंधी आने लगती है। अंधेरा होते ही आंख से दिखाई नहीं देता पर उसके बदले में आधा सेर सड़े हुए शीरे का शरबत या आधा सेर चना तथा छह पैसे रोज मजदूरी मिलती है, जिसमें ही उसे अपने परिवार का पेट पालना पड़ता है।

बिस्मिल भारतवर्ष के नवयुवकों को आह्वान करते हुए कहते हैं- जिसके हृदय में भारतवर्ष की सेवा के भाव उपस्थित हों या जो भारत भूमि को स्वतंत्र देखने या स्वाधीन बनाने की इच्छा रखता हो उसे उचित है कि ग्रामीण संगठन करके कृषकों की दशा सुधार कर उनके हृदय से भाग्य निर्माता को हटाकर उद्योगी बनने की शिक्षा दें। परंतु आज देश की आजादी के 70 वर्ष बाद भी किसानों की स्थिति और बदतर हो गई और अब तक चार लाख किसान आत्महत्या कर चुके हैं। परिवार के सभी सदस्य आंधी-तूफान, सर्दी-गर्मी में खेती बाड़ी करते हैं परंतु उनके घर की पूंजी भी समाप्त हो जाती है। उत्पादन पर उसका खर्च 200 रुपए होता है और उसे मिलते हैं 100 रुपए। किसानों के बेटे-बेटियों और पत्नियों का विलाप सत्ताधारियों को सुनाई नहीं देता। किसान मर रहा है और उनके प्रतिनिधि विधायक और सांसद विधानसभा और संसद में जनता के नाम पर कुत्ते-बिल्ली की तरह लड़ते हैं अपने वेतन और भत्तों के लिए मुंह सी लेते हैं और सर्वसम्मति से बिल पास करा देते हैं। जब ऐसी विधायक और सांसद आपके प्रतिनिधि बनेंगे तो किसानों का भला कैसे होगा उनकी आवाज कौन उठाएगा।

शहीद-ए-आजम भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह, लाला लाजपत राय और आर्य समाज के नेताओं ने 1924 में किसान आंदोलन चलाया। किसानों पर पानी का कर बढ़ा दिया गया। किशनसिंह ने जमींदार लीग की स्थापना की। आबियाने का विरोध करने के लिए एक जलसा किया। जलसों के इतिहास में यह जलसा अपने स्वरूप और परिणाम दोनों दृष्टियों से अनुपम था। जलसे के पण्डाल में प्रवेश पाने के लिए एक आना टिकिट रखा गया इस एक आने से सात हजार रुपए इकट्ठे हो गए या यूं कहें कि एक लाख बारह हजार इस जलसे में शामिल हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकार ने यह टैक्स वापस ले लिया लगाया ही नहीं। परंतु ब्रिटिश सरकार ने बदला लेने के लिए राजद्रोह के आरोप में किशनसिंह को गिरफ्तार कर लिया और उन्होंने सरदार किशनसिंह को नंगा करके बेंत लगाने की टिकटिकी पर बांध दिया। तेज गर्मी का मौसम जिसमें आप बैठे हुए हैं ऐसा ही मौसम था जब किशनसिंह को नंगा करके बेंत लगाने की टिकटिकी पर धूप में बांध दिया। तेज गर्मी का मौसम, नंगा शरीर, बंधे हुए हाथ पैरों से खड़े रहने की टिकटिकी पर लटके रहने की थकान, सबके सामने नंगे होने की झेंप साथ ही हर घड़ी बढ़ती भूख-प्यास किसी को भी आत्मसमर्पण करने के लिए काफी थी। सूरज ने धूप बरसाना तो बंद कर दिया परंतु अफसरों ने तड़ातड़ बेंत लगाना बंद नहीं किया। बेंत की टिकटिकी से खुलकर अक्सर आदमी गिर पड़ता है क्योंकि जेल की बेंत इस राक्षसी ढंग से मारी जाती है कि नस-नस सुन्न पड़ जाती है। सरदार किशनसिंह भी खुलते ही गिर पड़े पर यह गिरना कमजोरी का नहीं फालिज के आक्रमण से गिरना था, उन पर फालिज का आक्रमण हो गया था।

किशनसिंह के बाद भगतसिंह भी अपने पिता के पदचिन्हों पर चला और किसानों की आवाज उठाते हुए कहा कि मेरा लक्ष्य किसानों और मजदूरों की सरकार बनाना है। न्यायालय में जब भगतसिंह से पूछा गया कि क्रांति से तुम्हारा क्या मतलब है तो भगतसिंह ने कहा कि क्रांति बम और पिस्तौल की संस्कृति नहीं है। क्रांति की तलवार विचार की सान पर तेज होती है और हमारा यह विचार है कि जब तक किसानों और मजदूरों का दमन समाप्त नहीं होगा तब तक हम फांसी के तख्ते से भी पुकारते रहेंगे इनकलाब जिंदाबाद।

सामवेदी जी ने किसान महापंचायत के अध्यक्ष रामलाल जाट की ओर मुखातिब होते हुए कहा कि आज मोदी सरकार ने रामनाथ कोविंद को राष्ट्रपति बनाने का प्रस्ताव किया है और वे राष्ट्रपति बन भी जाएंगे। कल तक रामनाथ कोविंद को केवल बिहार के लोग ही जानते थे परंतु रामलाल जाट को आज सारा भारत जानता है। हम यह चाहते हैं कि रामलाल जाट राष्ट्रपति बने और किसानों को शोषण से मुक्ति मिले।

भगतसिंह के सपनों को साकार करने के लिए किसानों और मजदूरों का राजनीतिक दल होना चाहिए। जब उनके प्रतिनिधि विधानसभा और संसद में जाएंगे तभी किसानों को मुक्ति मिलेगी। गला फाड-फाड कर किसानों की हमदर्दी बटोरने वाले और उनके वोट लेकर सत्ता पर जाने वाले विधायक और सांसद उनके साथ गद्दारी करते हैं, उन पर गोली चलाकर उनकी हत्या करते हैं।

आजादी से पहले कवियों और शायरों का क्रोध और गुस्सा आपकी धमनियों में प्रवाहित होना चाहिए।

मुफलिसी और ये महाजिर हैं नजर के सामने
सैकड़ों सुल्तान ओ जाबिर हैं नजर के सामने
सैकड़ों चंगेज ओ नादिर हैं नजर के सामने
ऐ गमे दिल क्या करूं ऐ बहशते दिल क्या करूं
लेके एक चंगेज के हाथों से खंजर तोड़ दूं
ताज पर उसके दमकता है जो पत्थर तोड़ दूं
कोई तोड़े या ना तोड़े मैं ही बढ़कर तोड़ दूं
बढ़ के इस इन्दर सभा का साजो सामा फूंक दूं
इसका गुलशन फूंक दूं उसका शबिस्ता फूंक दूं
तख्ते सुल्तां क्या मैं कस्रे सुल्तां फूंक दूं
ऐ गमे दिल क्या करूं

तो किसानों को शासकों का राजसिंहासन ही नहीं फूंकना अपितु उनके राजमहलों को भी आग लगा कर राख करना है। आप भगतसिंह, बिस्मिल और लाला लाजपत राय को अपना आदर्श मानते हुए नारा लगाइए- इनकलाब जिंदाबाद। इसके बाद सारा शामियाना इनकलाब जिंदाबाद के नारों से गूंजने लगा।

॥ ओ३म् ॥
वेद प्रचार, विश्व शान्ति, राष्ट्रोत्थान एवं सम्पूर्ण क्रांति के लिये समर्पित पाक्षिक पत्र
आर्य नीति

सत्यव्रत सामवेदी, सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रक 5च-13, जवाहर नगर, जयपुर के लिये हरिहर प्रिन्टर्स, आदर्श नगर, जयपुर से मुदित।

सम्पादक मण्डल
चक्रकीर्ति सामवेदी, घनश्यामधर त्रिपाठी
फोन नं. : 0141-2652697 का. : 2652951, 2621859
M :9829052697, e-mail: Vishwamaryam@gmail.com
9929804883 Vishwamaryam@rediffmail.com

आर्य समाज, विद्या समिति एवं शिक्षा समिति, आदर्श नगर, जयपुर के सौजन्य से प्रकाशित
-:: डाक वापसी का पता ::-
आर्य नीति, आर्य समाज, आदर्श नगर, जयपुर-4, राज.

प्रेषक : सत्यव्रत सामवेदी, सम्पादक, आर्य नीति
आर्य समाज, राजापार्क, जयपुर - 4
राजस्थान

प्रेषित : ....

पंजियन संख्या
RAJHIN(RNI)/2000/2567
डाक पंजीयन संख्या
JaipurCity/250/2015-17